

प्रिय छात्र / छात्रा,

यह पाठ्यक्रम जीवन के अनुरूपों की विशिष्टता तथा बच्चों की अधिगम आवश्यकताओं के प्रति शिक्षक-विद्यार्थियों को संवेदनशील बनाने का लक्ष्य रखता है। समावेशी शिक्षा सीमांतीकरण तथा बहिष्करण से प्रभावित लोगों पर विशेष ध्यान देने के साथ सभी की अधिगम आवश्यकताओं को संबोधित करने का प्रयास करता है। यह निःशक्तजन अधिकार अधिनियम 2016 के आलोक में और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।

विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी एक वृहद समूह का निर्माण करते हैं तथा सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई तथा अन्य सीमांतक समूहों तथा उनकी आवश्यकताओं की चर्चा इस कार्यक्रम के पाठ्यक्रमों में की गई है अतः इस पाठ्यक्रम का बल समावेशी शिक्षा पर है

समावेशन के प्रोत्साहन की आवश्यकता विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सम्मिलित करने हेतु सामान साझेदार के रूप में शिक्षा के सभी स्तरों पर सामान्य विकास हेतु उनको तैयार करने हेतु तथा साहस एवं विश्वास के साथ जीवन जीने हेतु उनको सक्षम करने हेतु विश्व भर में अधिकतर रूप से समझा जा रहा है।

शिक्षकों को कक्षाकक्ष शिक्षण में सभी विद्यार्थियों को लाने एवं सम्मिलित करने हेतु संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है। यह आवश्यक है कि जो शिक्षक कक्षाकक्षा अध्यापन तथा प्रबंधन करते हैं समावेशन के दर्शन के प्रति जागरूक हैं तथा विभिन्न प्रकार के समायोजन से दिसोन्मुख हैं जिनको आधारभूत संरचना, पाठ्यचर्या, शिक्षण विधियां तथा विविध विद्यार्थियों की आवश्यकताओं हेतु शिक्षण से संबंधित अन्य विद्यालयी अभ्यासों के रूप में विद्यालयों को करना चाहिए। समावेशी शिक्षा हेतु शिक्षकों को सभी विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को समझने की आवश्यकता है।

समावेशी शिक्षा, शिक्षा का एक वैकल्पिक रूप है जिसके अंतर्गत शिक्षा के उन सभी पक्षों को सम्मिलित किया जाता है जो बच्चे शारीरिक, मानसिक, सामाजिक रूप से बाधित होते हैं उन सभी के लिए ही समावेशी शिक्षा का प्रावधान होता है। समावेशी शिक्षा से अभिप्राय समावेशी अनुदेशन का प्रारूप तथा कार्यक्रम विकसित करना है ताकि असामान्य बच्चों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। अतः यह विषय शिक्षक शिक्षा से सम्बंधित सभी कोर्सों के लिए उपयोगी है। मुख्यतः विशेष शिक्षा विभाग द्वारा संचालित कोर्स जैसे – डी.एड. चतुर्थ सेमेस्टर पेपर-4, बी.एड. द्वितीय सेमेस्टर पेपर कोड- B6 एवं एम.एड. द्वितीय सेमेस्टर पेपर कोड- A5 तीनों के पाठ्यक्रम में यह विषय सम्मिलित है।

अतः मैं आपने सभी विद्यार्थियों को इस ऑनलाइन पाठ्य सामग्री शृंखला के माध्यम से समावेशी शिक्षा से सम्बंधित सभी इकाइयों के बारे में एक- एक कर समुचित जानकारी प्रदान करने की पूर्ण कोशिश करूँगी। प्रस्तुत सामग्री में मानवीय त्रुटियाँ स्वाभाविक हैं अतः आप सब से अनुरोध है की त्रुटियों से मुझे अवगत कराते हुए उपयोगी पाठ्य-सामग्री से लाभन्वित हों।

धन्यवाद....!

-आभा द्विवेदी

मो०- 8577098888

समावेशी शिक्षा

समावेशी शिक्षा एक प्रकार की ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी भी भेदभाव व अंतर के बिना समाज के प्रत्येक वर्ग को शिक्षा प्रदान की जाती है ताकि समाज के सभी बालको को एक स्तर पर लाया जा सके।

समावेशी शिक्षा की परिभाषा:

यरशेल के अनुसार – “समावेशी शिक्षा के कुछ कारण योग्यता, लिंग, प्रजाति, जाति, भाषा, चिंता स्तर, सामाजिक -आर्थिक स्तर, निःशक्तता लिंग व्यवहार या धर्म से सम्बन्धित होते हैं।” शिक्षा शास्त्री के अनुसार- समावेशी शिक्षा को एक आधुनिक सोच की तरह परिभाषित किया जा सकता है कि “शिक्षा को अपने में सिमटे हुए दृष्टिकोण से मुक्त करती हैं और ऊपर उठाने के लिये प्रोत्साहित करती हैं। दूसरे शब्दों में- समावेशी शिक्षा अपवर्जन के विरुद्ध एक पहल हैं।

उमातुलि के अनुसार- “समावेशन एक प्रक्रिया है, जिसमें प्रत्येक विद्यालय को दैहिक, संवेगात्मक तथा सीखने की आवश्यकता को पूरा करने के लिए संसाधनों का विस्तार करना होता है।”

शैक्षिक समावेशन का अर्थ:

शैक्षिक समावेशन इस प्रकार की ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार की विशेषताएं रखने वाले बालकों को एक समान शिक्षा दी जाती है।

शैक्षिक समावेशन की परिभाषाएं:

श्रीमती आरके शर्मा के अनुसार- “शैक्षिक समावेशन एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था है जिसके द्वारा प्रतिभाशाली एवं शारीरिक रूप से अक्षम छात्रों को सूचित किया जाता है।”

प्रोफेसर एस.के.दुबे के अनुसार- “शैक्षिक समावेशन एक ऐसी शिक्षा प्रणाली है जो छात्रों की योग्यता क्षमता एवं स्थितियों के अनुरूप दी जाती है।”

शैक्षिक समावेशन की विशेषताएं:

शैक्षिक समावेशन की विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

- 1) शैक्षिक समावेशन में प्रयोग की जाने वाली विधियां अन्य शिक्षण विधियों से भिन्न है।
- 2) शैक्षिक समावेशन प्रतिभाशाली एवं बालक दोनों तरह के लिए प्रयोग की जाती है।

- 3) इस प्रकारकी शिक्षा प्रणाली में छात्रों की मानसिक स्तर का विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है।
- 4) सामान्य रूप से कार्य न कर पाने वाले छात्रों के लिए यह विशेष रूप से शिक्षा प्रदान की जाती है।

समावेशी शिक्षा के सिद्धान्त:

समावेशी शिक्षा के सिद्धान्त निम्न है-

- 1) बालकों में एक सी अधिगम की प्रवृत्ति है।
- 2) बालकों को समान शिक्षा का अधिकार है।
- 3) सभी राज्यों का यह दायित्व है कि वह सभी वर्गों के लिए यथोचित संसाधन सामग्री धन तथा सभी संसाधन उठाकर स्कूलों के माध्यम से उनकी गुणवत्ता में सुधार करके आगे बढ़ाएं।
- 4) शिक्षण में सभी वर्गों, शिक्षक, परिवार तथा समाज का दायित्व है कि समावेशी शिक्षा में अपेक्षित सहयोग करें।

समावेशी शिक्षा के उद्देश्य:

समावेशी शिक्षा की निम्नलिखित उद्देश्य है-

- 1) बालक के विकास के लिए सहायक वातावरण उपलब्ध कराना।
- 2) बालक में समाज के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण लाना।

- 3) समाज का बालको के प्रति संवेदनशीलता का विकास।
- 4) सीखने की प्रवृति का विकास।
- 5) बालको में नवजीवन का संचार।
- 6) बालको को स्वालंबी होने के लिए व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करना।

विशिष्ट बालक

विशिष्ट बालक का अर्थ:

विशिष्ट बालको को जानने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि सामान्य बालक किसे कहते है। विद्यालय में हर समाज, हर वर्ग तथा भिन्न-भिन्न परिवारों से बालक आते है ये सभी विभिन्न होते हुये भी सामान्य कहलाते है परन्तु कुछ ऐसे भी होते है तो शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक एवं सामाजिक गुणो की दृष्टि से अन्य बालको से भिन्न होते है।

सामान्य बालक वे होते है जिनका शारीरिक स्वास्थ्य एवं बनावट इस प्रकार की होती है कि उन्हे सामान्य कार्य करने मे किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नही होता है। जिनकी बुद्धि लब्धि औसत (90 से 110) के बीच होती है। ऐसे बालको की शैक्षिक उपलब्धि कक्षा के अधिकांश बालको के समान होती है।

कृशैंक के अनुसार- "एक विशिष्ट बालक वह है जो शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, सामाजिक रूप, सामान्य बुद्धि एवं विकास की दृष्टि से इतने अधिक विचलित होते है कि नियमित कक्षा- कार्यक्रमो से लाभान्वित नही हो सकते है तथा जिसे विद्यालय में विशेष देखरेख की आवश्यकता होती है।"

विशिष्ट बालक के प्रकार:

विशिष्ट बालक सामान्य बालको से भिन्न होते है। विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालक आपस में भी एक दूसरे से भिन्न होते है। ये भिन्न बौद्धिक योग्यताओं में, शारीरिक योग्यताओ मे या शैक्षिक उपलब्धि मे हो सकते है। मुख्य रूप से सभी प्रकार के विशिष्ट बालको को चार वर्गों मे विभाजित किया है-



शारीरिक रूप से विशिष्ट बालक:

निःशक्तजनों की शिक्षा हमारी लोकतांत्रिक आवश्यकता है यद्यपि निःशक्तजनों के लिए विशेष शिक्षा और समन्वित शिक्षा की व्यवस्था की गई है लेकिन निःशक्तजनों की संख्या को देखते हुए यह नगण्य है। शारीरिक निःशक्तता के

क्षेत्र मे नेत्रहीन, मूक और बधिर, विषमांग, विरूपति, विकृत हड्डी एवं लूले-लगड़े आते है।

दृष्टि निःशक्तता:

दृष्टि निःशक्तता मानव समाज की सबसे दुःखद स्थिति है यद्यपि वर्तमान समाज मे उपयोगी अनुसंधान के परिणामस्वरूप अनेक विशेष विद्यालयों की स्थापना हुई थी। इस निःशक्तता के प्रमुख कारण संक्रामक रोग, दुर्घटना, चोट, वंशानुगत प्रभाव, परिवेश का प्रभाव तथा विषैले पदार्थों का प्रयोग आता है। 60 से 70 प्रतिशत बच्चे संक्रामक रोग के कारण दृष्टिहीन होते है। दृष्टिहीन बालको को छह वर्गों का विभाजन शिक्षा की दृष्टि से उपयुक्त माना गया है।

- 1) जन्मजात अथवा पूर्णांध वर्ग- इस वर्ग में पांच वर्ष के पूर्णांध आते है।
- 2) इसमे वे पूर्णांध आते है जो 5 वर्ष के बाद दृष्टि खो बैठते है।
- 3) आंशिक जन्मांध वर्ग मे दृष्टि कमजोर होती है, ऐसे बालक थोडा बहुत देख सकते है।
- 4) आंशिक अंधता वर्ग में आंशिक दृष्टिहीन बालक आते है जिनकी दृष्टि किसी विकार, रोग के कारण किसी भी आयु मे कमजोर हो जाते है।
- 5) आंशिक जन्मजात दृष्टि वर्ग के बालक केवल नाममात्र ही देख पाते है।
- 6) आंशिक दृष्टि वर्ग के बालक किसी कारण से सामान्य दृष्टि खो देते है।

श्रवण निःशक्तता:

शारीरिक निःशक्तता के अन्तर्गत दूसरा महत्वपूर्ण वर्ग मूक-बधिर निःशक्तजनों का है। इसके अन्तर्गत वे बालक आते हैं जो किसी कारण से पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से सुनने में असमर्थ होते हैं। ये वंशानुक्रम या वातावरण किसी भी कारण से हो सकता है।

श्रवण दोष बालक की पहचान-

इस प्रकार के बालको को पहचानने के लिये निम्नलिखित विधियों का उपयोग करते हैं-

विकासात्मक पैमाना: इसमें संवेदी गामक यंत्र के सन्दर्भ में बालक के वर्तमान स्तर का पता लगाकर उसकी श्रवण निःशक्तता का पता लगाते हैं।

चिकित्सीय परीक्षण: इसमें बालक के श्रवण अंगों की क्रियाशीलता तथा निष्क्रियता की जांच करके श्रवण क्षमता का पता लगाया जाता है।

जीवन इतिहास विधि: इसमें श्रवण दोषयुक्त बालक के जीवन विवरण का पता लगाकर, उसके स्वास्थ्य-इतिहास, विकास का इतिहास

तथा पारिवारिक पृष्ठभूमि को जानकर यह पता लगाने का प्रयास किया जाता है कि श्रवण – दोष अनुवांशिक है अथवा अर्जित है।

क्रमबद्ध निरीक्षण: इसमें माता पिता अथवा शिक्षक द्वारा बालक के व्यवहार का सूक्ष्म निरीक्षण किया जाता है और बालक के असामान्य व्यवहार का पता लगाया जाता है।

श्रवण बाधित की शिक्षा व्यवस्था:

ऐसे बालक कक्षा में ठीक प्रकार से समायोजित नहीं हो पाते हैं अतः इन्हें निम्न लिखित साधनों का प्रयोग करना चाहिए-

- 1) श्रवण यंत्र का प्रयोग करना चाहिए।
- 2) आत्म विश्वास को विकसित करने के लिए नर्सरी शिक्षा देनी चाहिए।
- 3) एक स्वर को दूसरे स्वर से भिन्न करने के लिए श्रवण प्रशिक्षण देना चाहिए।
- 4) इनके लिए कक्षा व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि इन्हें आगे की पंक्ति में बैठाया जाए।
- 5) शिक्षक को भी उच्च स्वर में बोलना चाहिए तथा इस प्रकार की व्यवस्था होनी चाहिए कि छात्र शिक्षक के होठों को ठीक प्रकार देख सके।

वाणी दोष:

वाणी दोष सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। वाणी दोष में सुनने वाला व्यक्ति, क्या कहा है, इस पर ध्यान न देकर किस प्रकार कहा जा रहा है, इस पर ध्यान देता है और श्रोता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है। इससे श्रोता एवं वक्ता दोनों ही परेशान होते हैं। वाणी दोष के अन्तर्गत दोषपूर्ण उच्चारण, दोषपूर्ण स्वर, अटकना एवं हकलाना, देर से वाणी विकास आदि आता है।

वाक विकलांगता के कारण:

वाक विकलांगता का कारण श्रवण-क्षमता में कमी या उसका विकारयुक्त होना है। कान के रोग के कारण यह विकृति आती है। मस्तिष्क पर चोट लग जाना, तालु कण्ठ, जीभ, दांत आदि में किसी प्रकार की विकृति के कारण यह निःशक्तता आ जाती है। वातावरण के कारण भी यह विकार आ जाता है। वाणी विकार अनुकरण के आधार पर भी होता है। यदि बालक के वातावरण में किसी प्रकार का दोष होता है तो वह इन दोषों को अपना लेता है जैसे शब्दों का उच्चारण, उतार-चढ़ाव, चेहरे के भाव इत्यादि अनुकरण द्वारा सीखे जाते हैं।

वाक् विकलांगों का वर्गीकरण:

1) आंगिक विकृति

- 2) सामान्य वाक् विकृति
- 3) मानसिक वाक् विकृति
- 4) विशेष वाक् विकृति

वाक्-विकृति को दूर करने तथा वाक् विकास के लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर वाक्-निःशक्तजन की शिक्षा को महत्वपूर्ण माना जाता है-

- 1) वाक्-ध्वनि के शुद्ध एवं स्पष्ट टेप-रिकार्डर रखना।
- 2) वाक्-विकृति का समुचित संग्रह करना।
- 3) बालक को स्वस्थ तथा मनोरम वातावरण में रखना।
- 4) बालक के मुक्त विकास के लिए विद्यालय के वातावरण को सहज एवं स्वभाविकता प्रदान करना।
- 5) वाक्-दोषी बालक को मौखिक अभिव्यक्ति के अधिक अवसर प्रदान करना।

अस्थि निःशक्ताः

अस्थि निःशक्त बालक वे होते हैं, जिनकी मांसपेशियों, अस्थि व जोड़ों में दोष या विकृति होती है जिससे वह सामान्य बालकों की तरह कार्य नहीं कर पाते हैं और उन्हें विशेष सेवाओं, प्रशिक्षण, उपकरण, सामग्री तथा सुविधाओं की आवश्यकता होती है। इसमें पोलियोग्रस्त, आदि आते हैं।

अस्थि निःशक्तता के कारण:

वंशानुगत कारक- इसमें निःशक्तता एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होती है जो कि कार्य कुशलता में बाधा उत्पन्न करती है।

जन्मजात कारक- ये जन्म के समय के कारक होते हैं इसमें गर्भावस्था में कुपोषण संक्रामक रोग, मां का दुर्घटनाग्रस्त होना प्रमुख है जिसके कारण बालक में अस्थिदोष उत्पन्न हो जाते हैं।

अर्जित कारक- इसमें वे कारक आते हैं जो जन्म के पश्चात् किसी प्रकार के दोष उत्पन्न करते हैं। इसके किसी प्रकार की दुर्घटना, बीमारियाँ जैसे पोलियो या अन्य बीमारी के लम्बे समय तक रहने पर होती हैं।

अस्थि निःशक्त बालको की शिक्षा:

- 1) ऐसे बालको के शिक्षक को विशेष ध्यान देना चाहिए तथा उनके बैठने के लिए उचित फर्नीचर की व्यवस्था करनी चाहिए।
- 2) इन बालको के लिए एक स्थान पर बैठकर खेले जाने वाले खेलों का आयोजन होना चाहिए।
- 3) इन बालकों के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण व निर्देशन दिया जाना चाहिए।

- 4) इनकी आवश्यकता के अनुसार इन्हे व्यवसाय उपलब्ध कराने चाहिए।
- 5) ऐसे बालकों को कश्चित् अंग उपलब्ध कराये जाने चाहिए।
- 6) शिक्षको को इन बालको की सीमाओ को देखते हुये क्रियाए आयोजित की जानी चाहिए।

मानसिक रूप से विशिष्ट बालक:

इसमें प्रतिभाशाली, मानसिक मंद एवं सृजनात्मक बालक आते हैं।

प्रतिभाशाली बालक:

प्रतिभाशाली बालक वे बालक होते हैं जिनकी बौद्धिक क्षमताए सामान्य बालको की अपेक्षा अधिक होती है। ये जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्ट प्रदर्शन करते हैं।

टरमेन के अनुसार- ऐसे बालको की बुद्धिलब्धि 140 से ऊपर होती है जबकि मिल के अनुसार- 190 से 200 बुद्धि-लब्धि वाले बालक प्रतिभाशाली होते हैं। विटी के अनुसार- प्रतिभाशाली बालक संगीत, कला, सामाजिक नेतृत्व तथा दूसरे विभिन्न क्षेत्रों में अच्छा प्रदर्शन करते हैं।

शिक्षक के निरीक्षण द्वारा बालक का व्यवहार, रुचियों, योग्यताओं, क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त कर प्रतिभाशाली बालको की पहचान की जाती है।

विभिन्न प्रकार के अभिलेखों के आधार पर किसी भी विद्यार्थी की प्रतिभा को पहचाना जा सकता है। इसमें मुख्य रूप से संचयी अभिलेख, स्थानान्तरण अभिलेख, स्वास्थ्य अभिलेख, निर्देशन और परामर्श अभिलेख, मासिक प्रगति अभिलेख उपाख्यान संबंधी अभिलेख हैं।

प्रतिभाशाली बालकों के शिक्षण के प्रमुख उपागमः

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा एक आसान कार्य नहीं है क्योंकि यह संख्या में कम होते हैं और समूह विजातीय होता है। अतः पूरे समूह पर किसी एक प्रणाली को लागू करना कठिन कार्य है। प्रतिभाशाली बालकों के शिक्षण के प्रमुख तीन उपागम हैं।

त्वरण-

इसमें प्रतिभाशाली बालकों को उनकी शारीरिक आयु की अपेक्षा मानसिक आयु के आधार पर प्रवेश दिया जाता है। ऐसे बालकों को विद्यालय में शीघ्र प्रवेश दिया जाता है। हावसन के अनुसार- ऐसे बालक आठवीं कक्षा या उसके बाद अधिक अच्छी प्रगति दिखाते हैं।

समृद्धिकरण-

समृद्धिकरण का तात्पर्य है कि नियमित कक्षाओं में दिये जाने वाले पाठ्यक्रम में शैक्षिक अनुभव अधिक देकर उसे समृद्ध बनाया जाना।

प्रतिभाशाली बालको के समुचित विकास के लिए पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि उसे पढ़ना बालक के लिए एक चुनौतिपूर्ण हो।

विशिष्ट कक्षाएं-

इनमे सामान्य विद्यालयो मे ही विशेष कक्षाएं आयोजित कर विशेष रूप से नियोजित पाठ्यक्रमो को प्रस्तुत किया जाता है। विशिष्ट प्रतिभावान व्यक्तियों को बुलाकर उनके अनुभवो से छात्रो को लाभान्वित करवाया जाता है।

मानसिक मंद बालक:

मानसिक मंदता एक ऋणात्मक संकल्पना है। मानसिक रूप से मंद बालक घर, समाज तथा विद्यालय का कार्य नहीं कर पाते हैं। डॉल ने 1941 में मानसिक मंदता की पहचान के लिए 6 प्रमुख बातें बतायी हैं-

- 1) जब बालक सामाजिक परिस्थितियों के साथ समायोजन न कर सके।
- 2) जब बालक अपने साथियों के साथ मित्रवत व्यवहार न कर सके।
- 3) जब व्यवहारिक तथा वातावरण सम्बन्धी कारणों से उसका मानसिक विकास न हो सके।

- 4) जब बालक उतना कार्य न कर सके जितना उस आयु के लोगों से आशा की जाती है।
- 5) विशेष शारीरिक दोष के कारण वह सामान्य कार्य न कर सके।
- 6) जब बालक में कुछ ऐसे दोष हो जिन्हें परिष्कृत नहीं किया जा सकता है।

अमेरिकन एसोसिएशन ऑन मेण्टल डेफिशिएन्सी (1959) के अनुसार- मानसिक मंदता में सामान्य बौद्धिक प्रकार्य सामान्य से कम स्तर के होते हैं। मानसिक मंदता की उत्पत्ति विकासात्मक अवस्थाओं में होती है और समायोजित व्यवहार को क्षति पहुंचाने से भी यह सम्बन्धित है।

मानसिक मंद बालकों की शिक्षा व्यवस्था:

- 1) मानसिक मंद बालकों की शिक्षा व्यवस्था के लिए कुछ सिद्धान्तों को प्रयोग में लाना चाहिए।
- 2) मानसिक मंद बालकों के लिए मूर्त माध्यम से शिक्षा दी जानी चाहिए। डूनॉन ने अपने अध्ययनों में यह पाया कि ऐसे बालक ऐलेक्जेण्डर परफारमेन्स टेस्ट को आसानी से कर लेते हैं।
- 3) कक्षा का आकार छोटा होना चाहिए तथा निर्देश व्यक्तिगत होने चाहिए।
- 4) करके सीखने के सिद्धान्त पर शिक्षा आधारित होनी चाहिए।

- 5) मानसिक मंद बालकों को वास्तविक स्थान पर ले जाकर शिक्षा देनी चाहिए।
- 6) शिक्षण को वास्तविक जीवन पर आधारित करके करना चाहिए। विभिन्न विषयों को आपस में सहसम्बन्धित करके शिक्षा देनी चाहिए।
- 7) मानसिक मंद बालकों के लिए अलग से विशेष शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालक:

यहाँ पर शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालकों के दो प्रकारों के बारे में बताया गया है-

शैक्षिक पिछड़े बालक:

पिछड़े बालक वह होते हैं जो कक्षा में किसी तथ्य को बार-बार समझाने पर भी नहीं समझते हैं और औसत बालकों के समान प्रगति नहीं कर पाते हैं। ये पाठ्यक्रम तथा पाठ्य सहगामी क्रियाओं में किसी प्रकार की रुचि नहीं लेते हैं। इनकी बुद्धिलब्धि सामान्य हाने पर भी इनकी शैक्षिक उपलब्धि कम होती है बर्ट के अनुसार- “एक पिछड़ा बालक वह है जो अपने स्कूल जीवन के मध्यकाल में अपनी कक्षा से नीचे की कक्षा का काम नहीं कर सकते जो कि उसकी आयु के लिए सामान्य कार्य हो।”

पिछड़े बालकों को तीन आधारों पर जाना जा सकता है-

- a. बुद्धिलब्धि के आधार पर
- b. शैक्षिक उपलब्धि के आधार पर
- c. शैक्षिक लब्धि के आधार पर

पिछड़े बालक की शिक्षा:

पिछड़े बालको पर यदि उचित ध्यान दिया जाता है तो वह शिक्षा में प्रगति कर सकते हैं। इसके लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए-

विशिष्ट विद्यालय-

पिछड़े बालकों के लिए उनके अनुसार पाठ्य क्रम, उपयोगी सहायक सामग्री, प्रशिक्षित शिक्षकों सहित अलग से विद्यालय की स्थापना की जाए जिससे वह अपनी कमियों को कम समझ सके तथा अधिक सुरक्षा का अनुभव कर सके। यह विद्यालय आवासीय होने चाहिए।

विशिष्ट कक्षाएं-

पिछड़े बालकों के लिए सामान्य विद्यालयों में विशिष्ट कक्षाएं आयोजित की जा सकती है। इन कक्षाओं में विशेष प्रशिक्षित अध्यापक नियुक्त किये जाने चाहिए। इन कक्षाओं में शिक्षक आवश्यकतानुसार

पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि में परिवर्तन कर सकते हैं तथा इन बालकों को कठिन प्रतियोगिता का सामना नहीं करना पड़ेगा।

सामान्य कक्षा में विशिष्ट प्राविधान-

इसमें सामान्य कक्षाओं में विशेष प्राविधान करके, उन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इन बालकों के लिए पाठ्यक्रम में लचीलापन होना चाहिए जो उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुरूप हो। इन विद्यार्थियों के लिए शिक्षकों को निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना होगा-

- 1) शिक्षक व्यवहारिक और अनुभवी होना चाहिए।
- 2) शिक्षक को मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए। जिससे वह छात्रों की विशेष परेशानियों तथा कठिनायों को समझ सके।
- 3) पिछड़े बालकों में असफलता की दर अधिक होती है अतः शिक्षकों में धैर्य होना चाहिए।
- 4) शिक्षक को बाल-केन्द्रित शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

सीखने में अक्षम बालक:

सीखने में अक्षम बालक उन बालकों को कहते हैं जो कि मौखिक अभिव्यक्ति, सुनने सम्बन्धी क्षमता, लिखित कार्य, मूलभूत पढ़ने की क्रियाओं में,

गणितीय गणना, गणितीय तर्क तथा स्पेलिंग में उनकी शैक्षिक उपलब्धि तथा बौद्धिक योग्यताओं में सार्थक विभेद दिखायी देता है। यह विभेद किसी और अक्षमता का परिणाम नहीं होता है। यह बालक ठीक प्रकार से सुन, सोच, बोल, पढ़ तथा लिख नहीं पाते है।

विशेषताएँ:

सीखने में अक्षम बालकों में मुख्य रूप से अति क्रियाशीलता, विलम्बित वाणी विकास पढ़ने, लिखने तथा गणित की समस्या तथा विस्मृति आदि पाये जाते है।

कारण:

1. पारिवारिक कारक-

- 1) सीखने में अक्षमता विशेष परिवारों में अधिक पायी जाती है।
- 2) डिसलेक्सिया का प्रमुख आधार वंशानुक्रम होता है।
- 3) यह जन्म से पूर्व, जन्म के समय तथा जन्म के बाद की समस्याओं का परिणाम होता है।
- 4) माँ का स्वास्थ्य, खान पान तथा जीवन का तरीका
- 5) सिर में चोट, संवेगात्मक वंचन

- 6) केन्द्रीय स्नायुमण्डल का ठीक प्रकार से विकसित न होना आदि।
- 7) श्रव्य गत्यात्मक समस्याएं, तथा किसी प्रकार की एलर्जी का होना।

2. मनोवैज्ञानिक कारक-

- 1) ध्यान केन्द्रित करने में असमर्थता
- 2) खराब अनुशासन का होना

3. पर्यावरण कारक-

- 1) स्वास्थ्य, गलत आहार तथा सुरक्षा।
- 2) परिवार में उचित भाषा का प्रयोग न होना।
- 3) सामाजिक सांस्कृतिक कारक
- 4) विद्यालयी उपस्थिति, कार्य तथा पढ़ने की आदतें
- 5) ठीक प्रकार की शिक्षा न मिल पाना

सामाजिक रूप से विशिष्ट बालक:

समाज के अनुरूप व्यवहार न कर सकने वाले बालक सामाजिक रूप से विशिष्ट बालक कहलाते हैं-

बाल-अपराधी

बालक के व्यक्तित्व के समुचित विकास में सामाजिक नियन्त्रणों तथा सामाजिक मानकों की विशेष भूमिका है। बालक के विकास में परिवार के

साथ-साथ सामाजिक वातावरण, बालक की इच्छा आकांक्षाएँ तथा महत्वाकांक्षा का भी प्रभाव पड़ता है। बाल अपराधी वह है जो समाज के नियमों तथा कानूनों का उल्लंघन इस प्रकार करते हैं कि वह विभिन्न असामाजिक गतिविधियों में लिप्त हो जाते हैं।

हैली के अनुसार- एक बच्चा जो सामान्य व्यवहार के प्रस्तावित मानकों से भिन्न व्यवहार करता है अपराधी बालक कहलाता है। जैविकीय दृष्टिकोण के अनुसार बालक के स्नायुमण्डल में किन्हीं प्रकार की गड़बड़ियाँ होने पर वह असामाजिक व्यवहार करने लगता है। अतः असामाजिक व्यवहार करना जन्मजात होता है।

उपर्युक्त दृष्टिकोणों के अनुसार बाल अपराधी के व्यवहार का विश्लेषण करने पर निम्न बातें प्रमुख हैं-

- 1) अपराधी बालक असामाजिक गतिविधियों में लिप्त रहते हैं तथा सामाजिक मानकों का उल्लंघन करते हैं।
- 2) बाल अपराधी एक किशोर होते हैं जो लगभग 12 वर्ष से 21 वर्ष की आयु के मध्य होता है।
- 3) उनकी असामाजिक गतिविधियाँ इतनी अधिक होती हैं कि उनके प्रति कानूनी कार्यवाही आवश्यक होती है।
- 4) इन्हें किशोर बन्दीगृहों में रखा जाता है।

अपराधी क्रियाओं के प्रकार-

भारतीय संविधान के परिपक्षेय में बाल-अपराध में वे सभी व्यवहार आ जाते जिनमें सामाजिक, नैतिक मूल्यों की अवहेलना की जाती है अथवा राष्ट्रीय बाल अधिनियम का उल्लंघन होता है।

- 1) अर्जन करने की प्रवृत्ति
- 2) धोखा धड़ी
- 3) उग्र प्रवृत्तियां
- 4) बचाने या भागने की प्रवृत्ति
- 5) यौन अपराध

बाल अपराध के उपचार-

बाल अपराध एक सामाजिक समस्या है अतः इसके उपचार करते समय दो बातें प्रमुख हैं-

- (1) जो बाल अपराधी है उनका उपचार करना
- (2) ऐसी शिक्षा तथा क्रिया करवाना जिससे वे पुनः अपराध में लिप्त न हों।

मनोवैज्ञानिक विधियाँ:

इसमें निरीक्षण करके अपराध की मात्रा का पता लगा कर अपराधी को निम्न विधियों द्वारा ठीक करने का प्रयास किया जाता है-

पुनः शिक्षा- इसमें शिक्षा का उद्देश्य केवल पढ़ना लिखना ही नहीं वरन् समस्या के प्रति जानकारी देकर आत्म का निर्माण करना है।

निर्देशित विधि- इसमें बालक को अपनी दमित इच्छाओं और संवेगों को व्यक्त करने का अवसर दिया जाता है।

प्रोत्साहन- इसमें बाल अपराधी को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि वह भविष्य में इस प्रकार का अपराध नहीं करेगा।

वातावरणीय उपचार- इस विधि में बालक के परिवार तथा सामाजिक वातावरण में सुधार लाने का प्रयास किया जाता है।

सुझाव और परामर्श- इसमें बाल अपराधियों को सकारात्मक सुझाव देकर उन्हें सही रास्ते पर लाया जाता है तथा परामर्श के द्वारा उनके परम अहम् को सुदृढ़ किया जाता है।

मादक-द्रव्यों व्यसनी बालक:

मादक द्रव्यों का सेवन प्राचीन काल से किसी न किसी रूप में किया जा रहा है। प्राचीन काल में सामाजिक और धार्मिक उत्सवों में इन पदार्थों का सेवन किया जाता था। भारत वर्ष में वर्षों पूर्व से भांग व चरस का सेवन किया जाता था। आधुनिक समाज के प्रत्येक वर्ग में मादक पदार्थों के सेवन की लत बढ़ रही है। मादक द्रव्य से तात्पर्य उन द्रव्य तथा औषधियों से है जिनका उपयोग नशा, उत्तेजना, उर्जा तथा प्रसन्नता के लिए किया जाता है। चरस, गांजा, भांग, अफीम, कोकीन आदि का सेवन करने वाले को मादक द्रव्य व्यसनी कहा जाता है।

मादक द्रव्य व्यवसन के कारण:

मादक द्रव्यों का प्रयोग किसी भी स्तर पर हो सकता है परन्तु यह सबसे अधिक किशोरावस्था तथा प्रौढ़ावस्था में पायी जाती है। इसके प्रमुख निम्नलिखित कारण हैं-

- 1) अधिकांश लोग मादक द्रव्यों का सेवन प्रारम्भ में दर्द को दूर करने के लिए करते हैं।
- 2) अधिकांश युवा वर्ग मादक पदार्थों का प्रयोग अपने भ्रम प्रभाव में करते हैं जिससे वे संसार की सत्यता से अपने को दूर करके एक कृत्रिम संसार स्थापित कर सके।

- 3) कभी-कभी बेराजगारी, अनिश्चित भविष्य, पारिवारिक परेशानियों, लिंग परेशानियों आदि के कारण मादक पदार्थों का सेवन प्रारम्भ कर देते हैं।
- 4) मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मादक पदार्थों का सेवन हीन भावना से बचने के लिए, किशोरावस्था में उत्पन्न तनाव को दूर करने के लिए, अवसाद को शांत करने आदि के लिए करते हैं।
- 5) दूषित सामाजिक वातावरण, भ्रष्टाचार, भा भतीजावाद, पक्षपात जिसके कारण युवावर्ग ठीक प्रकार से शिक्षा एवं रोजगार नहीं प्राप्त कर पाते हैं तथा कुण्ठा का शिकार हो जाते हैं, मादक पदार्थों का सेवन प्रारम्भ कर देते हैं।
- 6) माता पिता का उचित नियन्त्रण न हो, दोनो माता-पिता का कार्यरत होना, संयुक्त परिवार का अभाव, परिवार का उच्च अथवा निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के कारण बालक मादक पदार्थों का सेवन करना प्रारम्भ कर देते हैं।
- 7) संगति के प्रभाव के कारण भी किशोर या युवा मादक पदार्थों का सेवन करते हैं।

मादक द्रव्यों व्यसन के परिणाम:

मादक पदार्थ का अत्यधिक सेवन करने से स्वास्थ्य में अचानक गिरावट आ जाती है। भूख कम लगती है तथा इन लोगों में विभ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। व्यक्ति अपने जीवन मूल्यों तथा सामाजिक मूल्यों को भूल जाता है। **विक्टर हार्सले** ने अपने अध्ययन में यह पाया कि मादक द्रव्यों के प्रभाव से व्यक्ति में सनकीपन, चर्मरोग, हृदयरोग, लीवर की समस्या उत्पन्न हो जाती है। जिससे उनका व्यक्तिगत अपराधी, तनावग्रस्त तथा अकर्मण्य हो जाता है। मादक पदार्थों के सेवन से झूठ बोलना सीख जाता है तथा उलझन भरा स्वभाव हो जाता है। ये बालक विद्यालय से अधिकांश अनुपस्थित रहते हैं तथा जब भी संभव होता है पैसा चुराने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं करते हैं। मादक द्रव्यों के सेवन में अधिकांश युवा वर्ग होता है अतः यह सामाजिक विकास में बाधक होते हैं। मादक पदार्थों के दुरुपयोग के परिणाम स्वरूप दंगे, हत्यायें, बलात्कार, अपहरण, अभद्रता, अनैतिक कार्य तथा व्यवहार बढ़ते जा रहे हैं।

निरोधक उपाय:

मादक पदार्थ के व्यसन की समस्या गम्भीर रूप धारण कर चुकी है। वर्तमान समय में सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि इसके शीघ्र रोकथाम, समय से नियन्त्रण तथा इन्हें पुनः सामान्य जीवन जीने की तकनीकों तथा विधियों का ज्ञान सबको दिया जाए। शिक्षा को एक सशक्त साधन के रूप में प्रयोग कर

अभिभावकों, सरकार, गैरसरकारी संस्थाओं तथा निर्देशन कर्त्ताओं को इस बढ़ती हुयी समस्या को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम अभिभावकों को परिवार का वातावरण स्वस्थ तथा स्थायी रखने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि इस प्रकार के व्यवहार का एक प्रमुख कारण प्यार की कमी होता है। शिक्षक को विभिन्न स्तरों जैसे स्कूली छात्रों, कालेज तथा विश्वविद्यालय के छात्रों तथा अन्य युवाओं को मादक पदार्थों के दुरुपयोग की जानकारी देनी चाहिए इसके लिए इस प्रकार के व्यक्तियों की बातें ध्यानपूर्वक सुननी चाहिए तथा एक दोस्त के रूप में सहायता करनी चाहिए। शिक्षण संस्थाओं में पाठ्य सहगामी क्रियाओं पर बल दिया जाना चाहिए जिससे छात्र अपने अवकाश के समय का ठीक प्रकार से प्रयोग कर सके। व्यक्तित्व विकास के कार्यक्रम जैसे नेतृत्व करने का प्रशिक्षण, स्वानुशासन उत्पन्न करने का प्रशिक्षण, साहसिक कार्य एवं युवा कैम्पों की व्यवस्था नियमित रूप से की जाए। चुने हुये क्षेत्रों में व्यापक तथा अधिकांश सर्वेक्षण करना चाहिए जिससे यह पता लग सकेगा कि विभिन्न आयु और समुदायों के लोगों में से कौन मादक पदार्थों का सेवन अधिक करते हैं इन आंकड़ों के आधार पर इनके रोकथाम के लिए कार्यविधि निर्धारित की जा सकती है।